भारत की सर्वाधिक घातक समस्या क्या?

भारत में कुल 11 समस्याएँ लगातार बढ़ रही हैं–

1–चोरी, डकैती, लूट। 2–बलात्कार 3–मिलावट, कम तौलना 4–जालसाजी, धोखाधड़ी 5–हिंसा, आतंक और बलप्रयोग 6–चरित्रपतन 7–भ्रष्टाचार 8–साम्प्रदायिकता 9–जातीय कटुता 10–आर्थिक असमानता 11–श्रम शोषण

यद्यपि ये सभी समस्याएँ लगभग समान गति से स्वतंत्रता के बाद लगातार बढ़ रही है तथा इनके घटने के अभी कोई मार्ग नहीं दिख रहे, किन्तु इनमें भी छः समस्याएँ विशेष रुप से घातक हैं। 1 हिन्दुत्व का घटता मनोबल 2 हिंसा पर बढ़ता विश्वास 3 स्वार्थभाव वृद्धि 4 आर्थिक विषमता 5 चरित्रपतन 6 केन्द्रीयकरण। नीति शास्त्र के अनुसार तीन का केन्द्रीयकरण घातक होता है–1 सम्मान का नैतिकता से हटकर बुद्धिजीवीयों के पास बढ़ना 2 धन सम्पत्ति का श्रम से हटकर पूँजीपतियों के पास इक्ट्ठा होना। 3 शक्ति का समाज से निकल कर राजनीति के पास इक्ट्ठा होना।

वर्तमान भारत में सबसे खतरनाक स्थिति यह बन गई है कि धन, सम्मान तथा शक्ति, अर्थात् तीनों शक्तियॉ राजनेताओं के पास केन्द्रित हो गई हैं। अर्थात् सम्पत्ति के मामले में भी राजनेता सबसे आगे निकलने का प्रयास कर रहा है तो सम्मान के मामले में भी तथा शक्ति तो स्वाभाविक रुप से उसके पास है ही। इस तरह इन तीनों का एक जगह केन्द्रित होना एक प्रकार से समाज को गुलाम बनाने की स्थिति तक आ गया है, जिसे हम सामाजिक आपातकाल की स्थिति भी कह सकते हैं।

इस आपातकाल के समाधान के लिए हमें कुछ प्रयत्न करने होंगे–1 सम्मान को नैतिकता के साथ जोड़ने का प्रयास 2 सुविधा को धन के साथ जोड़ना। 3 सिर्फ शक्ति राजनेताओं के पास रहे। इस तरह सम्मान और धन को राजनीति के प्रभाव से मुक्त करने का प्रयास होना चाहिए। यदि यहॉ से प्रांरभ करेंगे तो राजनैतिक शक्ति का केन्द्रीयकरण कम होगा, तथा सामाजिक शक्ति आंशिक रुप से मजबूत होगी। यदि इन तीनों शक्तियों का अलग–अलग केन्द्रीयकरण किसी सीमा रेखा को तोड़ता है तो सामाजिक शक्ति सबको अनुशासित करे। सामाजिक शक्ति भी किसी व्यक्ति या व्यक्ति समूह के पास संग्रहित न होकर परिवार, गॉव, जिला, प्रदेश, देश और समाज तक विभाजित हो। इसका अर्थ है कि प्रत्येक इकाई अपने आंतरिक मामलों में स्वतंत्र हो तथा अपने से ऊपर वाली इकाई की सहायक हो। साथ ही ऊपर वाली इकाई से अनुशासित भी हो। मेरा सुझाव है कि हम आप सबको अलग–अलग समस्याओं के समाधान के साथ–साथ इस एक समस्या अर्थात् राजनैतिक शक्ति के विकेन्द्रीयकरण के विरुद्ध एक साथ शक्ति लगानी चाहिए।

2 जे एन यू के छात्रो पर पुलिस का लाठी चार्ज

हैदराबाद युनिवर्सिटी के एक छात्र की आत्महत्या के विरोध में जे एन यू के आन्दोलनरत छात्र, संघ कार्यालय की ओर बढ़ रहे थे तो दिल्ली पुलिस ने उन छात्रों को बहुत बेरहमी से पीटा। इस पिटाई में एक छात्रा भी घायल हुई। जिसका बाद में पता चला कि वह बड़े–बड़े बालों वाला छात्र था। इस घटना की देश भर में निंदा हुई। सिर्फ अकेला मैं था जो इस घटना से विचलित नहीं हुआ।

दो प्रश्न इस घटना के साथ जुड़े हुए हैं–1. संघ समर्थित गुंडों और वामपंथ समर्थित गुंडों के बीच निरंतर बढ़ते टकराव में वर्तमान प्रशासन का संघ परिवार के पक्ष में झुकाव। 2. पुलिस की बर्बरता। यदि हम संघ परिवार तथा वामपंथ समर्थित हिंसा की तुलना करें तो बंगाल और केरल वामपंथ समर्थित राज्य माने जाते है। तो छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, राजस्थान संघ समर्थित राज्य। स्पष्ट है कि बंगाल और केरल में संघ कार्यकर्ताओं पर वामपंथियों ने हिंसक आक्रमण किये, जो निरंतर जारी रहे। आज भी इस मामले में बंगाल और केरल पीछे नहीं हैं। दूसरी ओर छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, राजस्थान में वामपंथ समर्थित छात्रों पर उतने घातक आक्रमण नहीं हुए। आज भी हिंसा के मामले में बंगाल और केरल, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश और राजस्थान से कई गुना आगे दिखते हैं। इस प्रश्न का उत्तर खोजना होगा कि दोनों परिस्थितियों में ऐसा अंतर क्यों है।

यदि पुलिस बर्बरता की चिंता करें, तो प्रश्न उठता है कि पुलिस और नागरिक में से बलप्रयोग की स्थिति में कौन और कितना गलत है? नागरिक को अपनी व्यक्तिगत आत्मरक्षा के अतिरिक्त किसी भी परिस्थिति में किसी के साथ बलप्रयोग का अधिकार नहीं है। जबकि पुलिस को ऐसा अधिकार है। यदि कोई नागरिक पुलिस पर ही बलप्रयोग करे तो उसका अपराध तो कई गुना बढ़ जाता है क्योंकि जब उसे किसी अन्य नागरिक पर ही बलप्रयोग का अधिकार नहीं तो पुलिस पर तो हो ही नहीं सकता। यदि कोई नागरिक हिंसा करता है और कोई पुलिस वाला हिंसा करता है तो यदि किसी पुलिस वाले ने व्यक्तिगत नीयत के आधार पर किसी नागरिक पर

जानबुझकर बलप्रयोग किया तो पुलिस वाले का अपराध गंभीर माना जायेगा, और उसे नागरिक की अपेक्षा कई गुना अधिक दण्ड मिलना चाहिए। किन्तु यदि किसी पुलिस वाले ने किसी हिंसा पर आमादा नागरिक पर सीमा से अधिक बलप्रयोग किया तो पुलिस वाले का अपराध बहुत सामान्य और छोटा माना जायेगा। आज सारे देश में अपराधियों, हिंसा समर्थकों और अराजकतावादियों ने यह प्रचार कर रखा है कि पुलिस बर्बर हो गई है, अत्याचार कर रही है, शांतिपूर्ण आन्दोलनों पर भी सीमा से अधिक आक्रमण कर रही है। जबकि मैं समझ रहा हूँ कि पुलिस को जिस सीमा तक अत्याचार करना चाहिए पुलिस उतनी हिम्मत नहीं जुटा पा रही है और उसी का परिणाम है कि आज भारत में गुंडा तत्व आन्दोलनों के नाम पर लगातार अपनी सीमायें तोड़ रहा है। यदि पुलिस अपना कर्तव्य ठीक से निभाती तो शायद ऐसी सीमाएँ तोड़ने वालों का मनोबल गिर जाता जबकि पुलिस को तो समाज, संविधान और कानून ने सीमा तोड़ने वालों को विशेष स्थिति में गोली मारने तक का अधिकार दे रखा है। इतने अधिकारों के बाद भी यदि कोई सीमा तोड़ने का दूस्साहस करता है तथा उस दुस्साहस से किसी सामान्य नागरिक को कष्ट होता है तो ऐसी पुलिस को हम कायर न कहें तो और क्या कहें। पुलिस के विरुद्ध चल रहे निरंतर घातक दुष्प्रचार को रोकना ही चाहिए।

गुंडे दो गुटों में विभाजित होकर समाज की शांति व्यवस्था को संकट में डाल रहे हैं। ऐसी स्थिति में हमारे साथियों को सर्तक भी रहने की जरुरत है और सक्रिय भी। यदि कहीं ऐसा टकराव होता है जो दो पेशेवर समूहों के बीच है तो हमारा कर्तव्य है कि हम तीन में से कोई एक मार्ग परिस्थिति अनुसार चुने। 1. हम ऐसे विवाद में निर्लिप्त रहें। 2. हम ऐसे विवाद में निष्पक्ष रहें और न्याय के पक्ष में खड़े हों 3. हम ऐसे गुटों के टकराव में कमजोर गुट को शक्ति देते रहें जिससे ये दोनों में से कोई भी एक गुट परास्त न होकर एक दूसरे को कमजोर करते रहें। ये तीनों ही मार्ग परिस्थिति अनुसार उचित हैं। किन्तु मेरी अपने सभी साथियों को स्पष्ट सलाह है कि आप ऐसे उपद्रवरत समूहों में से किसी एक के साथ प्रतिबद्ध न हों। एक बात यह भी है कि हमें इस बाबत भी सावधान रहना चाहिए कि यदि पुलिस कहीं सीमा से अधिक बलप्रयोग कर रही है चाहे वह महिला ही क्यों न हो, तो हम किसी भी परिस्थिति में तब तक पुलिस के विरुद्ध शामिल न हों जब तक यह स्पष्ट न हो जाये कि पुलिस वाले ने गलती करने के अपेक्षा जान बुझकर व्यक्तिगत कारणों से कोई अत्याचार किया है। हिंसा को निरुत्साहित करने के लिए हमें कुछ आपातकालीन व्यवस्थाएँ करनी चाहिए, और ऐसी आपातकालीन व्यवस्था में से ही यह भी एक है

3 जे एन यू विवाद और एक तटस्थ समीक्षा

वर्तमान समय मे एक सर्वमान्य सिद्धान्त है कि उग्रवाद तात्कालिक लाभ देता है, तथा दीर्घकालिक नुकसान। उग्रवाद कालांतर मे आतंकवाद की दिशा में बढ़ता है और आतंकवाद को सिर्फ कुचला ही जा सकता है, उसे कभी संतुष्ट नहीं किया जा सकता।

भारत में स्वतंत्रता पूर्व से लेकर आजतक तीन ऐसी विचारधाराएं है। जो उग्रवाद का पोषण करती है। 1. संघ परिवार की विचारधारा 2. इस्लामिक विचारधारा 3. वामपंथी विचार धारा। स्वतंत्रता पूर्व कट्टरपंथी इस्लाम तथा संघ परिवार की विचारधारा के बीच प्रत्यक्ष टकराव था। उस समय वामपंथी विचारधारा शैशव काल में थी। स्वतंत्रता के बाद नेहरू जी का समर्थन पाकर वामपंथी विचारधारा मुख्य धारा में आ गई और इस्लामिक तथा संघ परिवार की विचार धारा से भी आगे निकल गई। तीनों ही विचारधाराओं में अनेक समानताएं भी है और कुछ असमानताएं भी। तीनों का सन् 47 के पूर्व स्वतंत्रता के आंदोलन में कोई महत्वपूर्ण योगदान नहीं रहा। व्यक्तिगत रूप से कुछ लोग स्वतंत्रता संघर्ष में शामिल हुए। तीनों ही विचार धाराए हिंसा पर विश्वास करती है। तीनों का संस्थागत चरित्र न होकर संगठनात्मक चरित्र होता है। तीनों ही केन्द्रीयकरण की पक्षधर है तथा विकेन्द्रीयकरण या अकेन्द्रियकरण को निरूत्साहित करती है। तीनों ही लोकतंत्र को लक्ष्य नहीं मानती बल्कि केन्द्रियकरण का मार्ग मानती है। तीनों ही व्यक्ति के मौलिक अधिकारों को स्वीकार नहीं करती। तीनों ही न्याय की अपेक्षा अपनत्व को महत्वपूर्ण मानती है। साथ ही तीनों गुण प्रधानता की जगह संख्या विस्तार पर जोर देती हैं। तीनों सत्ता के साथ तालमेल बनाकर रखती है।

किन्तु तीनों ही विचारधाराओं में समानता के साथ–साथ कुछ भिन्नताएं भी हैं।

1. संघ विचारधारा भारतीय राष्ट्रवाद की पोषक है, तो शेष दोनों राष्ट्रवाद के विपरीत अंतराष्ट्रीय संगठनों की संवाहक । संघ परिवार तथा वामपंथी विचार धारा के लोग आर्थिक मामलों में ईमानदारी को बहुत महत्व देते हैं। तीनों ही विचार धाराओं के लोग त्याग के प्रति बहुत संवेदन शील होते हैं। किन्तु तीनों में से भी संघ परिवार के लोग जान लेने और जान देने में बहुत पीछे रहते है, जबकि अन्य दोनों बहुत आगे। उग्रवादी मुसलमान तथा

उग्रवादी वामपंथी आसानी से आतंकवाद की तरफ झुक जाते हैं, जबकि संघ परिवार के लोग आतंकवाद की तरफ नहीं झुकते। स्पष्ट कर दें कि प्रज्ञा ठाकुर, असीमानंद मामला सामने आते ही संघ परिवार और अधिक सतर्क हो गया। संघ परिवार तथा इस्लामिक विचार धारा के लोग व्यक्तिगत चरित्र तथा खानपान के मामले में बहुत सतर्क रहते हैं, जबकि वामपंथी विचारधारा के लोग ऐसे व्यक्तिगत चरित्र और खानपान की नैतिकता को अपनी प्रगति में बाधक मानते है। स्पष्ट है कि वामपंथी विचारधारा में महिला—पुरूष के बीच दूरी घटना एक प्रगति में सहायक आचरण माना जाता है।

स्वतंत्रता के तत्काल बाद संघ परिवार की विचारधारा से प्रेरित गांधी की हत्या की एक ऐसी घटना घटी जिसने संघ परिवार को आजतक उबरने नहीं दिया। संघ परिवार ने इस कलंक से मुक्त होने का भरसक प्रयास किया । किन्तु वह कलंक अब तक एक अमिट दाग के सरीखा चिपका हुआ है। गांधी हत्या की घटना को एक सुअवसर मानकर वामपंथियों ने उसका भरपूर लाभ उठाया। गांधीवादी संस्थाओं मे वामपंथियों ने भरपूर प्रवेश करके उनका पूरा—पूरा उपयोग किया तथा कांग्रेस पार्टी के साथ भी मुख्य तालमेल बिठाने मे गांधी हत्या का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

पिछले कुछ वर्षो से साम्यवाद नीचे की ओर गया तथा इस्लामिक कट्टरवाद भी धीरे—धीरे विश्व व्यापी बदनामी झेलने लगा। परिणाम स्वरूप वामपंथ और उग्रवादी इस्लामिक विचारधारा के बीच एक प्रत्यक्ष गठजोड़ बन गया । इस गठजोड़ से संघ, भाजपा परिवार को छोड़कर अन्य सभी राजनैतिक दलों का तालमेल हुआ। इस तालमेल के पूर्व भी पंडित नेहरू तथा वामपंथ का एक अघोषित तालमेल चल रहा था, जिस तालमेल के परिणाम स्वरूप पंडित नेहरू ने वामपंथ के गढ़ के रूप मे विस्तार के लिये जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी की स्थापना की। इस यूनिवर्सिटी का तानाबाना कुछ इस तरह बुना गया कि जे एन यू लगातार वामपंथ की दिशा मे बढ़ती चली गई, तथा बाद मे कट्टरपंथी इस्लाम के साथ उसका समझौता हो गया। सिद्धांत रूप में उग्रवाद आतंकवाद की दिशा में बढ़ता ही है, और इस तरह जे एन यू भी आतंकवाद की दिशा में बढ़ता—बढ़ता नक्सलवाद तथा कश्मीरी आतंकवाद का गढ़ बनता चला गया। स्वाभाविक है कि उग्रवादी साम्यवाद तथा उग्रवादी इस्लाम इस आतंकवादी दिशा को रोक नहीं पाये। नेहरू जी की योजना अनुसार ही भारत सरकार का बहुत कीमती पैसा जे एन यू पर पानी की तरह खर्च किया जाता रहा और जे एन यू धीरे—धीरे उग्रवादी वामपंथी और आगे चलकर आतंकवादी नक्सलवादियों को देश की मुख्य धारा में शामिल करता गया। जहां जे एन यू से प्रारंभिक काल में वेद प्रताप वैदिक पुष्पेश पंत सरीखे लोग आगे निकलकर सामने आये तो मध्यकाल मे प्रकाश करात, सीताराम यचूरी सरीखे वामपंथी भी यहीं से निकले हुए हैं, और बाद के काल खंड में इसी जे एन यू ने प्रमुख नक्सलवादियों को तैयार किया, जिनमे नेपाल तक के नक्सलवादी शामिल हैं। वामपंथी कुछ विशेष योग्यता लेकर वहां से बाहर निकलते थे। उन्हें नेहरू जी की योजनानुसार एक विचारक या नेता के रूप में देश में स्थापित कर दिया जाता था और इस तरह स्थापित नेता योग्यता न होते हुए भी योग्य होने का प्रमाण पत्र प्राप्त कर लेते थे तथा महत्वपूर्ण पदों पर बैठ जाते थे। विश्व विदित है कि जे एन यू एक स्वच्छंद आचरण प्रधान संस्थान रहा है । यहां स्वतंत्रता के नाम पर स्वच्छंदता विस्तार पाती रही। जे एन यू में छत्तीसगढ में नक्सली हमले में मारे गये 76 सैनिकों की मृत्यु पर खुशियां मनाई गई। यहां संसद भवन पर आक्रमण करने वाले आतंकवादियों को शहीद सिद्ध करने की योजनाएं भी बनती रहीं। यहां नरेन्द्र मोदी की सरकार को बदनाम करने की और कमजोर करने की सारी योजनाएं भी बनती रही। ये सब तो प्रत्यक्ष दिखाई देता है। परोक्ष रूप से क्या—क्या होता था यह आगे पता चलेगा।

ऐसे ही परोक्ष रूप से नदी में डूबकर मछली खाने की बुरी आदत में से 9 फरवरी की नारेबाजी रूपी मछली वामपंथ मुस्लिम उग्रवाद समर्थित जे एन यू के गले में फॅस गई। आयोजकों तथा वामपंथी रणनीतिकारों को सपने में भी आभास नहीं था कि इस पूरी घटना की गुप्त विडियों ग्राफी समाज के समक्ष आ जायेगी। क्योंकि पिछले कई वर्षो से इस प्रकार की गुप्त कार्यवाहियां करने में वे सफल होते रहे हैं किन्तु यह मामला उजागर हो गया। मैं महसूस करता हूॅ कि गांधी हत्या के बाद जे एन यू की यह घटना पहला अवसर है जिसने संघ परिवार के कलंक को कम करने और वामपंथी गठजोड़ को कलंकित करने का काम किया है। यह दाग गांधी हत्या से भी ज्यादा गंभीर कलंक के रूप में है । क्योंकि गांधी हत्या एक सामाजिक आक्रमण था और जे एन यू की घटना सामाजिक के साथ राष्ट्रीयता पर भी आक्रमण है। जो लोग पंजाब के बेअंत सिंह की घटना अथवा कुछ अन्य ऐसी ही घटनाओं को आधार बनाकर बचाव कर रहे हैं, वे यह भूल रहे हैं कि अन्य सारी घटनाएं देश मे आंतरिक आतंकवाद से जुड़ी थी और जे एन यू की घटना देश को कमजोर और टुकड़े करने वाले आतंकवाद से। यह मामला सीधा—सीधा प्रथम दृष्ट्या ही देश द्रोह है। प्रारंभ में जे एन यू के पक्षधर लोगों ने इसे ज्यादा गंभीर नहीं माना था। मैंने खुद सुना

है कि जे एन यू के अध्यक्ष कन्हैया कुमार पहले दिन टी.वी. पर आकर इस पूरी घटना का खुलकर समर्थन कर रहे थे, जबकि दूसरे दिन टी.वी. पर वे सतर्क और सहमे हुए थे और तीसरे दिन तो उनकी भाषा ही बदल गई। इस घटना से साम्यवाद तथा इस्लामिक कट्टरवाद को तो स्वाभाविक नुकसान होना ही था किन्तु राहुल गांधी की एक जल्दवाजी ने कांग्रेस पार्टी को भी भारी नुकसान कर दिया । विपक्ष के अन्य नेताओं ने कुछ संतुलित भाषा में जे एन यू के साथ एक जुटता दिखाई। ममता बनर्जी, मुलायम सिंह, लालू प्रसाद, अरविन्द केजरीवाल, नीतिश कुमार सरीखे लोग या तो चुप रहे या औपचारिकता तक सीमित रहे। किन्तु राहुल गांधी ने बचपना दिखाते हुए आर पार का कदम उठा लिया। सम्पूर्ण विपक्ष वामपंथियों के पीछे खड़ा है किन्तु राहुल गांधी ठीक बगल में आकर खड़े हो गये। प्रयत्न हो रहा है कि सारे घटना क्रम को संघ परिवार तथा विपक्ष के बीच की कुस्ती के रूप में बना दिया जाये किन्तु यह घटना इतनी गंभीर है दूरगामी है कि यह आतंकवाद से जुड़ी है राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ी है, और भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था पर आघात है । क्योंकि इस घटना में न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका पर तो आक्रमण किया ही गया है, साथ ही भारत की संप्रभुता पर भी आक्रमण किया गया है। यह सही है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता व्यक्ति का मौलिक अधिकार है। इसे कोई भी नियंत्रित नहीं कर सकता। जब तक वह किसी अन्य व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की सीमाओं का अतिक्रमण न करे। किन्तु विचार अभिव्यक्ति के लिये जुलुस निकालना धरना देना, विचार प्रचार करना आपका संवैधानिक अधिकार है, मौलिक नहीं। दोनों में बहुत फर्क है। चक्का जाम, किसी दूसरे की सीमा में जाकर हल्ला करना भी अपराध है। इन तीनों का अंतर समझना चाहिये।

प्रश्न उठाया जा रहा है कि गृह मंत्री राजनाथ सिंह द्वारा हाफिज सइद के साथ घटना को जोड़ने में कोई सच्चाई है कि नहीं। सीताराम यचूरी को धमकी देने वाले फोन के प्रचारित होने, डी राजा की लड़की के आंदोलन में शामिल होने तथा राजनाथ सिह जी के हाफिज सइद वाले बयान लगभग एक ही समान सच्चाई वाले दिखते है। नहीं कहा जा सकता है कि क्या सच है और क्या नहीं। किन्तु एक बात निर्विवाद रूप से सत्य है कि वामपंथी उग्रवादी इस्लामिक गठजोड़ गंभीर रूप से बहुत बैकफुट पर चला गया है। टी.वी. पर आने वाली बहस में स्पष्ट दिखता है कि ये लोग जबरदस्ती कुछ न कुछ बोल रहे हैं अन्यथा बोलने के लिये इनके पास उसी तरह कोई शब्द नहीं है, जिस तरह गांधी हत्या के समय एक समूह के पास बोलने के लिये कोई शब्द नहीं थे।

मै समझता हॅू कि शान्ति प्रिय लोगों को इन तीनों संगठनों बल्कि यह कहे कि दोनों समूहों से दूरी बनाकर रखनी चाहिये। यदि इन दोनों समूहों के बीच कोई प्रत्यक्ष टकराव होता है तो कमजोर पक्ष को मजबूत करते रहना चाहिये। साथ ही इस मुद्दे पर भी सतर्क रहना चाहिये कि संघ परिवार राष्ट्र की सीमाओं तक ही खतरनाक है और दूसरा पक्ष राष्ट्र की सीमाओं से बाहर जाकर भी खतरनाक हो सकता है। साथ ही मैं इस बात का भी पक्षधर हॅू कि जे एन यू सरीखे वामपंथी, दक्षिणपंथी संगठनों द्वारा संचालित विश्वविद्यालयों पर होने वाले सरकारी खर्च की भी समीक्षा होनी चाहिये। ऐसे विश्वविद्यालयों मे कार्यरत प्रोफेसरों प्राध्यापकों को भी किसी अनुशासन में लाया जाना चाहिये तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा सीमा की भी एक विभाजन रेखा होनी और दिखनी चाहिये।

पत्रोत्तर

1. डॉ0 अशोक पारख (अर्थशास्त्री) नवभारत 6 फरवरी 2016

महंगाई से असली भारत का चेहरा बदरंग

झूठ तीन प्रकार के होते हैं— पहला झूठ, दूसरा सफेद झूठ, और तीसरा आंकडो का झूठ। आंकडो से जुड़ा इन्द्रधनुषी झूठ यह है कि थोक मूल्य सूचकांक पर आधारित मुद्रास्फीति पर आधारित मुद्रास्फीति शून्य से नीचे ऋणात्मक हो गई है जबकि खाद्य वस्तुओं की कीमतों में पिछले वर्ष की तुलना में लगभग पचास प्रतिशत वृद्धि हो चुकी है। आज अर्थव्यवस्था बदल चुकी है परन्तु थोक मूल्य सूचकांक की संरचना नहीं बदली। इसमें ऐसी वस्तुऍ हैं जो अपना महत्व खो चुकी हैं। महंगाई नापने का थोक मूल्य सूचकांक कोई पैमाना नहीं है और व्यावहारिक रुप से इसकी कोई उपयोगिता नहीं है। उपभोक्ता मूल्य सूचकांक जिसका आपसे संबंध है फिर बढ़ रहा है। वैसे महंगाई पिछले 20—25 वर्षो से लगातार बढ़ रही है। वह कभी तेज गति से बढ़ती है तो कभी धीमी गति से। मानसून की बेरुखी से देश के आधे जिलों में सूखा होने से खाद्य वस्तुओं के भाव और अभाव दोनों बढ़ते जा रहे है। अर्थ विशेषज्ञों के अनुसार आने वाले समय में आर्थिक विकास सुस्त रहेगा और खाद्य मंहगाई जीना दूभर कर देगी। विशेषज्ञों का यह भी मानना है कि कमजोर मानसून के चलते आने वाले वर्ष में देश में एक बार फिर ऊंची मंहगाई दर का खतरा मंडरा रहा है।

रिजर्व बैंक की रिपोर्ट इन्फ्लेशन एक्सपेक्टेशंस सर्वे ऑफ हाउस होल्ड दिसम्बर 2015 के अनुसार भारतीय परिवारों का मानना है कि आने वाले वितीय वर्ष 2016–17 में 10.5 प्रतिशत की रफ्तार से महंगाई बढ़ेगी। सर्वे के अनुसार वित्तीय वर्ष की प्रथम तिमाही में यह वृद्धि प्रतिमाह 10.3 प्रतिशत रहेगी। सर्वे रिपोर्ट में 16 प्रमुख शहरों के 4828 परिवारों को सम्मिलित किया गया है, भारतीय परिवार रिजर्व बैंक के लक्ष्य से दोगुनी मंहगाई की आशंका व्यक्त कर रहे हैं। आज हमारी अर्थव्यवस्था में जिस तरह की घटनाऍ हो रही है उससें मंहगाई पर नियंत्रण कठिन होते जा रहा है। अमेरिकी डॉलर के मुकाबले रुपये की सेहत बिगड़ी हुई है। वैश्विक संकट के चलते भारतीय निर्यात मुश्किल के दौर से गुजर रहा है। भारत का विदेशी ऋण विदेशी मुद्रा भंडार से ज्यादा हो गया है। औद्योगिक उत्पादन में आशानुकूल वृद्धि नहीं होने के चलते विदेशी संस्थागत निवेशक अपना पैसा घरेलू बाजार से निकाल रहे हैं। इन सब कारणों से डालर की मांग बढ़ गई है जिससें रुपये की हालत खस्ता होती जा रही है। पेट्रोल और डीजल को सरकारी नियंत्रण से मुक्त कर दिया गया है, और उस पर केन्द्र सरकारें भारी करारोपण कर रही है जिससे कीमतें कम नहीं हो रही हैं। सरकार भले ही इसे आर्थिक सुधार मानती है पर महंगाई से जनता का हाल बेहाल है। समूची अर्थव्यवस्था में इससे उत्पादन लागत में इजाफा हो रहा है। आवश्यक वस्तुओं के दाम बढ़ने से कमजोर, निम्न और मध्य आय वर्ग की जेब पर सबसे अधिक बोझ पड़ता है। इससे जीवन स्तर की गुणवत्ता भी कम होती है। आर्थिक विकास की गति भी धीमी पड़ने लगती है। रिजर्व बैंक बार–बार कहता है कि केन्द्रीय बैंक का मुख्य काम कीमतों में स्थिरता बनाए रखना है परन्तु लचर मौद्रिक नीति के चलते महंगाई थमने का नाम नहीं ले रही है। मौद्रिक नीति कीमतों को कितना प्रभावित कर पाएगी यह कहना कठिन है। मंहगाई को रोकने के लिये राजकोषीय घाटे में ज्यादा से ज्यादा कमी लाना होगा। सरकार को वित्तीय वर्ष 2016–17 में राजकोषीय घाटे को सकल घरेलू उत्पाद के 3.5 प्रतिशत रखने के लक्ष्य को हासिल करने में काफी दिक्कतों का सामना करना होगा। यद्यपि चालू वित्त वर्ष में राजकोषीय घाटे को जीडीपी के 3.9 प्रतिशत पर ही रखने का लक्ष्य है लेकिन आने वाले वित्तीय वर्ष में सातवें वेतन आयोग और वन रैंक वन पेंशन के कारण लगभग 1 लाख करोड़ रुपये का बोझ बढ़ेगा। यह कैसा अर्थशास्त्र है कि सरकार का राजकोषीय घाटा नियंत्रण में नहीं है और सरकारी कर्मचारियों के वेतन मान में बढ़ोत्तरी की तैयारियॉ चल रही हैं। फिजूलखर्ची व सब्सिडी के बढ़ते बोझ से राजकोषीय घाटा बढ़ रहा है सरकारी खर्चो में फिजूलखर्ची पर रोक लगाने की कोई झलक नहीं दिखाई देती है। घाटा पूरा करने सरकार या तो ऋण लेगी या नये नोट छाप देगी। ऐसी दशा में स्फीतिकारक दशाओं को रोका नहीं जा सकता है। मंहगाई आम जनता को ठेंगा दिखाते हुए उफान पर पहुॅचने की राह पर है। मांग और आपूर्ति का संतुलन बिगड़ गया है। इसमें सट्टेबाजी और जमाखोरी की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। आज जिस तरह से हमारी अर्थव्यवस्था में सट्टेबाजी बढ़ी है वह चौंकाने वाली है। कमोडिटी वायदा बाजार ने व्यापार जगत को पस्त कर दिया है। राज्य सरकारों की रुचि जमाखोरों के खिलाफ कार्यवाही करने में नहीं है। नीतियों में ढांचागत कमियों को दूर करने के बजाए आयात का सहारा लिया जाता है। पिछले 10 वर्षो में खाद्य तेलों के क्षेत्र में हमारी आत्मनिर्भरता समाप्त हो चुकी है और हम आयात पर निर्भर हो गए हैं। आयात के जरिए आपूर्ति बढ़ाकर हालात पर काबू पाना कोई हल नहीं है। महंगाई को रोकने के लिए कृषि उत्पादन, विपणन और आपूर्ति के मोर्चे पर बड़े बदलाव करने होंगे। खाद्य महंगाई हमारे कुप्रबंधन का नतीजा है। कीमतें बिचौलिए, मुनाफाखोंरो और जमाखोरों के कारण भी खेतों से मंडी और वहॉ से उपभोक्ताओं तक पहुंचने के दौरान लगभग 1 लाख करोड़ रुपये का सालाना खाद्यान्न, फल और सब्जियॉ बर्बाद हो जाती है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि खाद्यान्न की बर्बादी रोकने प्रोसेसिंग प्लांट, कोल्ड स्टोरेज जैसी बुनियादी सुविधाऍ उपलब्ध नहीं करा पा रहे हैं। ऊंची ब्याज दर, परिवहन लागतों में वृद्धि नीति निर्माण के मामले में फैसले लेने में नाकामी व कारोबारी सुविधाओं में कमी के चलते गैर खाद्य वस्तुओं की कीमतें भी बढ़ रही है। महंगाई नियंत्रण के लिए सरकारी कदम कारगार सिद्ध नहीं हो रहे हैं। भारत के आम आदमी के लिए महंगाई खतरनाक है क्योंकि बाजार में हर चीज व सेवाऍ पिछले साल की तुलना में बीस से पच्चीस प्रतिशत महंगी मिल रही है। आर्थिक सुधारों का हम कितना ही गुणगान करें पर महंगाई के चलते असली भारत का चेहरा बदरंग होता जा रहा है। गरीबी जनित निराशा विफलता कभी भी आक्रोश का स्वरुप ले सकती है। यदि ऐसा ही सब कुछ चलता रहा तो महंगाई हम सबकों लील जाएगी।

उत्तरः—आप एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री हैं। देशभर में बड़ी संख्या में ऐसे अर्थशास्त्री मौजूद है, जो महंगाई के अस्तित्व को स्वीकार भी करते है तथा बहुत बढ़ाचढ़ा कर प्रचारित भी करते हैं। मैं ऐसे लोगों को अर्थशास्त्री कहूॅ या अनर्थशास्त्री यह मैं नहीं सोच पा रहा। मैं स्वयं न अर्थशास्त्र की चर्चा करता हूॅ न ही अनर्थशास्त्र की। मैं जो चर्चा कर रहा हूॅ वह यथार्थशास्त्र पर आधारित है। यद्यपि इस तरह की चर्चा करने वाला मैं अकेला दिखता हूॅ किन्तु

मैं अपने विचारों पर दृढ हूॅ। मेरे विचार में महंगाई के अस्तित्व को प्रचारित करने के लिए पूरे देश में एक जाल फैला हुआ है जो रिजर्व बैंक, मुद्रास्फीति, थोकमुल्य खुदरा मुल्य सूचकांक, विकास दर, डॉलर का मूल्य, विदेशी मुद्रा भंडार, राजकोषीय घाटा, सकल घरेलू उत्पाद, वायदा बाजार आदि कई प्रकार के कृत्रिम तानेबाने को मिलाकर बनता है। ये सारे तानेबाने एक दूसरे के असत्य काल्पनिक आंकड़ो पर निर्भर रहते है और सब मिलकर महंगाई के असत्य को समाज में सत्य के समान प्रचारित करते है। ऐसे ताने बाने से निकले महगांई के असत्य विचार को हमारे अर्थ शास्त्री सत्य के समान स्थापित करते रहते हैं

मैंने चार पॉच चीजों के यथार्थ का ऑकलन किया तो पाया कि महंगाई का सारा प्रचार पूरी तरह झूठा है। समाज में दो वर्ग है 1. उत्पादक 2. उपभोक्ता। कुल मिलाकर भारत में कृषि उत्पाद से जुड़े लोगों की संख्या एक दो प्रतिशत से अधिक नहीं है। इस कार्य में लगे मजदूर कृषक की श्रेणी में न आकर उपभोक्ता ही माने जायेंगे। उपभोक्ता वर्ग का औसत जीवन स्तर सुधर रहा है और उत्पादक, किसान का जीवन स्तर कमजोर हो रहा है। यहॉ तक कि उपभोक्ता के भूख से मृत्यु की घटनाऍ लगातार घट रही है, तो उत्पादकों की आत्महत्या की घटनाऍ लगातार बढ़ रही है। यदि महंगाई रही होती तो किसान मजबूत होते और उपभोक्ता कमजोर।

सन् 47 में एक मजदूर को किसान एक दिन की मजदूरी में जितना अनाज देता था उसकी अपेक्षा आज करीब पॉच गुना ज्यादा अनाज दे रहा है। मैं नहीं समझा कि अनाज सस्ता हुआ है कि मंहगा।

शहरों में किसी भी प्रकार का उत्पादन नहीं होता। कृषि उत्पाद सहित अन्य उत्पाद गावों में ही पैदा होते है। गॉवों से निकलकर लोग शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। इससे पता चलता है कि उपभोक्ता वस्तुऍ सस्ती हुई है और शहरी जीवन अधिक सुविधाजनक हुआ है। इसी तरह यह बात भी स्पष्ट है कि जिन वस्तुओं को महंगा बताया जा रहा है, वे वस्तुऍ आसानी से शहरों में पूरी की पूरी बिक जा रही है। इसका अर्थ है कि ये वस्तुऍ महंगी नहीं है। बल्कि क्रयशक्ति की तुलना में सस्ती हैं। पुराने जमाने में गर्मी के दिनों में मटर या टमाटर खाने का रिवाज नहीं था। आज यदि आप बेमौसम मटर और टमाटर खाकर महंगाई का रोना रोते है तो यह गलती महंगाई की नहीं है। मैं देख रहा हूॅ कि गॉवों में बासमती चावल पैदा करने वाला किसान उस बासमती चावल को उपभोक्ताओं के लिए बेच देता है और स्वयं मोटा चावल खाता है। बासमती चावल खाने वाला उपभोक्ता महंगाई– महंगाई चिल्लाकर आसमान सर पर उठा लेता है।

एक सामान्य सा सिद्धांत है कि जब उपभोक्ता वस्तुए क्रय शक्ति की तुलना में सस्ती होती हैं तब बचत अधिक होती है, और जब बचत अधिक होती है तब सोना, चांदी, जमीन और आवागमन का विस्तार होता है। भारत में लगातार औसत से कई गुना अधिक सोने चांदी और जमीन के मूल्य बढ़े है। साथ ही स्वतंत्रता के बाद आबादी वृद्धि के अनुपात से 20–30 गुना अधिक आवागमन भी बढ़ा। इससे स्पष्ट है कि उपभोक्ताओं के जीवन स्तर में बहुत तेजी से सुधार हुआ है और उसकी बचत भी बढ़ी है। तीन चीजे एक साथ कभी हो ही नहीं सकती। 1. मंहगाई 2. मंहगाई का जीवन पर बुरा प्रभाव 3. जीवन स्तर मे लगातार सुधार। मुझे आश्चर्य है कि हमारे आप जैसे अर्थशास्त्री तीनों बातों को एक साथ **प्रमाणित** कर रहे है जो प्राकृतिक रूप से असंभव है। अर्थात तीनों में से कोई न कोई एक बात अवश्य गलत है। विकास स्पष्ट दिख रहा है तो दो में से कौन सी बात गलत है यह आपको तय करना है। इन सबको देखते हुए भी महंगाई का प्रचार करने वालों की नीयत पर संदेह होता है। ये एक दूसरे के असत्य को बल देने के लिए आंकड़ों का झूठ तैयार करते रहते हैं।

पहला प्रश्न उठता है कि महंगाई का मापदण्ड क्या है। वस्तु के मूल्य तीन प्रकार के होते है– 1.वास्तविक 2. प्रचलित 3. प्रभाव डालने वाले। वास्तविक मूल्य वह होता है जो सन् 47 से लेकर आज तक की मुद्रास्फीति को घटाकर निकाला जाता है। सन् 47 में रुपये चांदी का था तथा एक डॉलर के बराबर था। आज भारत का रुपया यदि रांगे और कागज का हो गया तो क्या वस्तु महंगी हो गई? सच्चाई यह है कि रुपया का मूल्य घटा न कि वस्तु महंगी हुई। आप चांदी से तुलना छोड़ दे तो सरकारी आंकड़ो के अनुसार और यथार्थ में भी सन् 47 से आज तक रुपया का मूल्य करीब 87 रुपया के करीब है। इसका अर्थ हुआ कि जो वस्तु सन् 47 में एक रुपया की मिलती थी और आज 87 रुपया की मिलती है वह समतुल्य है। इस तरह सर्वे करने पर तो सिर्फ सोना, चांदी, जमीन ही महंगे हुए है। खाद्य तेल, दाले, डीजल, पेट्रोल, मांस लगभग सम मुल्य है तथा अन्य उपभोक्ता वस्तुऍ सस्ती या बहुत सस्ती हुई है जिनमें सभी प्रकार की खाद्यन्न कपड़ा शक्कर दूध तथा अन्य वस्तुऍ शामिल है।

महंगाई का दूसरा मापदण्ड है प्रचलित मूल्य जो आज दिखता है। यदि हम प्रचलित मूल्य को आधार बनावे तो हमें यह भी बताना पड़ेगा कि सन् 47 से आज तक इस मूल्य में औसत 87 गुना वृद्धि हुई है। तो इस मूल्य का सामान्य जनजीवन पर कितने गुना बुरा प्रभाव पड़ा। यदि 87 गुना नहीं पड़ा तो कितना पड़ा यह तो

बताना आवश्यक है। यदि नहीं पड़ा तो क्यों नहीं पड़ा। इसी तरह एक तीसरा भी मूल्य है जो क्रयशक्ति की तुलना में निर्धारित होता है। एक गरीब आदमी एक समय में गरीबी के कारण किसी सब्जी को महंगी समझता है। वही व्यक्ति कुछ वर्षो बाद अपनी आर्थिक स्थिति ठीक होते ही उसी सब्जी को सस्ती समझने लगता है तो प्रश्न उठता है कि महंगाई का इन तीन मापदण्ड में से कौन सा मापदण्ड सही है और किस मापदण्ड का औसत जीवन स्तर पर प्रभाव पड़ता है।

आपने खाद्य वस्तुओं को छः महिने में डेढ़ गुनी महंगी होना बताया यह बात सफेद झूठ भी है और लगता है कि जानबूझकर यह झूठ फैलायी जा रही है। पिछले वर्ष की तुलना में इस वर्ष सब प्रकार के खाद्यान सस्ते हुए हैं, बासमती चावल को छोड़कर। मैं अम्बिकापुर शहर का रहने वाला हूॅ। दो वर्ष पहले यहॉ चावल का भाव 20 रु किलो था जो घटकर 19रु किलो हो गया है। गेहूॅ भी तथा शक्कर भी सस्ती हुई है लोहा, तांबा, एल्यूमिनियम, कपड़ा भी सस्ता हुआ है यहॉ तक कि इन दो वर्षो में जमीन तथा मकान तक के मूल्य घटे हैं। डीजल, पेट्रोल भी सस्ता हुआ है।

पिछले दो तीन महिने पहले दालों के मूल्य जितना बढ़े थे वे भी तेजी से घट रहे है। नई फसल आते तक वे भी और घट जायेंगे। सब प्रकार की सब्जियॉ भी पिछले वर्ष की तुलना में सस्ती हुई हैं। मैं समझ ही नहीं पा रहा कि लगभग अधिकांश वस्तुऍ सस्ती या बहुत सस्ती होने के बाद भी महंगाई के आंकड़े कम न होने के पीछे किस प्रकार का और किसका षड़यंत्र है। निश्चित ही या तो यह राजनैतिक षड़यंत्र है जो महंगाई शब्द को सत्ता परिवर्तन का हथियार मानते है अथवा सरकारी कर्मचारियों का षड़यंत्र है जो अपनी वेतन वृद्धि के लिए महंगाई शब्द का उपयोग करते है। इस षड़यंत्र के परिणाम स्वरुप तैयार किये गये आंकड़ों को लेकर हमारे अर्थशास्त्री और मीडिया कर्मी सारे देश मेें महंगाई के झूठ को प्रचारित कर देते है। आपने सोलह प्रमुख शहरों के 4828 परिवारो का सर्वेक्षण किया। अच्छा होता कि आप सोलह गांवों के इतने ही परिवारों का सर्वेक्षण करते। शहरों में क्रयशक्ति तेजी से बढ़ रही है और बढ़ी हुई क्रयशक्ति जीवन स्तर में सुधार ला रही है। यदि आप बासमती चावल खाना चाहते हैं तो आप उसके महंगा होने का रोना नहीं रो सकते। यदि मोटा चावल या मोटा अनाज गांवों में महंगा हो और वह भी क्रयशक्ति और मूल रुपया की तुलना में हो तभी आप कोई निष्कर्ष निकाल सकते हैं।

आपने डॉलर का जिक्र किया। स्वतंत्रता से आज तक सामान्यतया डॉलर का मूल्य 87 रुपया होना चाहिए था जो अभी भी बढ़ते–बढ़ते 67 रुपये तक आया है। इसका अर्थ है कि डॉलर के मुकाबले में भारत का रुपया 67 वर्षो में करीब 25 प्रतिशत मजबूत हुआ है। यह अवश्य है कि इसे और अधिक मजबूत होना चाहिए था। आपने एक ओर तो घाटे की अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने का सुझाव दिया। दूसरी ओर टैक्स हटाने का भी सुझाव दिया। मैं नहीं समझा कि ये दोनों एक साथ कैसे संभव है। आप एक अर्थशास्त्री है तो क्या आप जानते है कि भारत में घाटे की पूर्ति के लिए रोटी, कपड़ा, मकान, दवा सभी प्रकार के अनाज खाद्य तेल वनोपज पेड़ पौधे आवला जैसी वस्तुओं पर भी भारी कर लगाये जाते है। मैं नहीं समझा कि डीजल, पेट्रोल की करवृद्धि की अपेक्षा गेहूॅ, चावल, दाल, सरसों तेल जैसे ग्रामीण उत्पादन तथा ग्रामीण उपभोक्ता वस्तुओं के टैक्स समाप्ति की चर्चा देश के अर्थशास्त्री क्यों नहीं करते। कहीं इसके पीछे भी कोई षड़यंत्र तो नहीं है? गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी के उत्पादन और उपभोग की वस्तुओं पर भारी कर लगाकर डीजल, बिजली की बात उठाने वालों की नीयत पर संदेह होता है।

दालों और खाद्य तेलों का आयात एक बुरी आदत है। भारत में यदि दालों और खाद्य तेलों के मूल्यों को बढ़ने से नहीं रोका जाता तो भारत का किसान इन दोनों मामलों में देश को आत्मनिर्भर बना देता। हम चीनी, चावल निर्यात करें और दाल आयात करें इसकी अपेक्षा तो यह अधिक अच्छा होता कि हम किसान को चीनी, धान की जगह दाल, तेल पैदा करने के लिए प्रोत्साहित करते और उसका एक ही मार्ग है कि गन्ने, धान और दलहन, तिलहन के मूल्यों में एक युक्तियुक्त फर्क हो।

जमाखोरी से महंगाई बढ़ती है यह प्रचार भी गलत है। वस्तु स्थिति यह है कि फसल के समय व्यापारी उतना स्टॉक नहीं कर पाता और उसके कारण फसल के समय किसान को कम पैसा मिलता है। दूसरी ओर उसी वस्तु का स्टॉक कम होने के कारण फसल बीत जाने के बाद मूल्य तेजी से बढ़ता है। या तो सरकार स्टॉक करे या न कर पाने के स्थिति में दूसरों को करने दे। तब उत्पादन और उपभोग के मौसम में असमानता अधिक नहीं होगी किन्तु सरकारों तथा आप जैसे अर्थशास्त्रियों के दुष्प्रचार के कारण यह समस्या निरंतर बनी रहती है जो वास्तव में उत्पादकों के लिए एक बहुत बड़ी समस्या हैं।

मैंने अपनी जानकारी के अनुसार कुछ यथार्थ लिखा है। मैं नहीं कह सकता कि मेरे कथन और आपके कथन में क्या और कितना सही है। मैं चाहता हूॅ कि मैं आपके साथ महंगाई विषय पर आपकी सुविधानुसार तिथि

और स्थान निश्चित करके एक सार्वजनिक चर्चा करुँ। इस चर्चा में व्यवस्था संबंधी होने वाला खर्च हमारा संगठन करेगा तथा साथ ही आपको 25000 रूपया की सम्मान निधि भी देने का प्रस्ताव करता हूॅ। मैं चाहता हूॅ कि हमारे आपके बीच की मंहगाई पर चर्चा की सच्चाई सार्वजनिक होनी चाहिए। इस चर्चा का विडियों बनाकर भी किसी टी. वी चैनल में दिखाने की व्यवस्था होगी। मैं चाहता हूॅ कि आपकी स्वीकृति मिले। आप इस संबंध में मुझसे 9617079344 पर चर्चा कर सकते हैं। अथवा हमारे बदरपुर स्थित दिल्ली कार्यालय से भी सम्पर्क कर सकते हैं।

2 ओम प्रकाश मंजुल, पीलीभित, उत्तर प्रदेश

ज्ञानतत्व के अंक 328 मे आपने मेरा एक पत्र भी छापा है और अंक 326 मे प्रकाशित मेरे आरक्षण संबंधी पत्र के साथ ही प्रकाशित अपनी समीक्षा के परिप्रेक्ष्य में पुनः प्रकाश स्वरूप अपेक्षाकृत मेरा पक्ष लेते हुए अपनी संक्षिप्त समीक्षा भी पुनः प्रकाशित की है। इसके लिये मैं आपका आभारी हूॅ।

आपने मेरे अधिकतर पत्रों को छापा है। पर यह भी सत्य है, जिसे मैंने अब से पूर्व नहीं लिखा, कि मेरे अधिकतर पत्रों में जो बात आपको अनुकूल नहीं लगी उसे आपने नहीं छापा। ऐसा ही अंक 328 मे छपे पत्र के साथ भी हुआ है। इसलिये मुझे पूरी उम्मीद है कि प्रस्तुत पत्र आपके भावी अंक में नहीं छपेगा या छपेगा तो फिर काट छाट के बाद ही छपेगा। पर यह पत्र आपके अंत करण में तो छपेगा ही। यही मेरा उद्देश्य भी है कि वह व्यक्ति जो संसार को प्रकाश देता है, प्रकाश देने की धारणा मान्यता रखता है, या प्रकाश देने का वादा करता है, उसकी अपनी आत्मा में कितना प्रकाश है? क्या उसमे इतना आत्मबल है कि पत्र के आइने में अपना भी चेहरा देख सके।

आरक्षण के संबंध में ज्ञानतत्व के अंक 326 में मेरे पत्र के प्रकाशन से पूर्व आपने आरक्षण के संबंध मे अंक 325 में आरक्षण की एक तटस्थ समीक्षा शीर्षक से अपने विचार प्रस्तुत किये थे। इस समीक्षा के प्रति क्रिया में मैंने एक विस्तृत पत्र आपको 12/12/2015 को इमेल किया था जिसे आपने नहीं छापा। इस अंक 328 में तो आपने मेरा वह पोस्टकार्ड छापा है, जो मैंने 326 मे आपके मुखारविन्द निसृत धूर्त जैसे शोंभायमान शब्द की प्रतिक्रिया से विचलित होकर 24/12/2015 को भेजा था। इसे भी आपने अपने हिसाब से काट छांटकर छापा है। एक निष्पक्ष विचारक और सज्जन व्यक्ति के रूप मे आपको अब भी उस पत्र को प्रकाशित करना चाहिये। आपके हित में भी रहेगा। क्योंकि दुनियां को आपकी निष्पक्षता एंव सज्जनता की जानकारी होगी। मैं और मेरे जैसे आरक्षण के विरोधी तो धूर्त हैं ही। पर आप तो मुनि विचारक स्वराज्य अभियान के संस्थापक संचालक, संयोजक और पुरोधा आदि जाने क्या–क्या है।

हालांकि इस अंक मे प्रकाशित आपकी समीक्षा को यदि बारीकी से पढ़ा समझा जाये तो परोक्ष रूप से यह मेरे विचारों का ही समर्थन है। समझदार के लिये इशारा काफी होता है। दूसरे आप को अपने अभियान के लिये सभी वर्गो के समर्थन की जरूरत है। मात्र ओम प्रकाश मंजुल या उस जैसे आरक्षण के विरोधियों से ही काम नहीं चलेगा। इस अंक में पुनः प्रकाशित आपकी संक्षिप्त समीक्षा के प्रति मैं कृतज्ञ हूॅ। एक विशेष बात जिसके कारण ही मुझे यह विस्तृत पत्र लिखना पड़ा है, वह यह है कि आपने अंक 326 में मुझे व्यक्तिगत धूर्त नहीं कहा था, वरन आरक्षण का विरोध करने वाले सभी लोगों को धूर्त कहा था। आपने अंक 328 में भी ऐसा ही कहा है। बल्कि इसमे आपने बहुत आगे बढ़ते हुए यह भी कह डाला कि आरक्षण के हर प्रकार का आप विरोध करते हैं, तथा आरक्षण का समर्थन करने वाले भी धूर्त है। मुनि जी देश ही नहीं पूरी दुनियां मे दो ही प्रकार के लोग है। आरक्षण के समर्थक या आरक्षण के विरोधी और आप दोनो को ही धूर्त कह चुके है तो आप यह बताये कि आप कहां पर हैं। दुनियां के लोगों के बीच में ही है या दूसरे किसी लोक में।

उत्तर– यह सच है कि मैं आपके पत्रों में से जो कुछ व्यक्तिगत लिखा होता है उसे निकाल देता हूॅ तथा यदि कोई बात किसी विचार के पक्ष विपक्ष में होती है उसे प्रकाशित करता हूॅ। इस पत्र का भी कोई अंश छापने लायक नहीं है क्योंकि इसमे भी आरक्षण के पक्ष विपक्ष में कुछ न हो कर मेरी प्रशंसा आलोचना से अधिक कुछ नहीं है फिर भी मैंने एक बार छाप देना उचित समझा । भविष्य मे ऐसी गलती दुबारा नहीं होगी। यदि कोई विचार होगा तो उस विचार की समीक्षा तथा प्रतिसमीक्षा छपेगी। अन्यथा ज्ञानतत्व आरोप प्रत्यारोप या प्रशंसा आलोचना के लिये नहीं है। आपने आरक्षण का समर्थन या विरोध करने वाले दो प्रकार के लोग बताये। मैंने दोनो की एक साथ आलोचना की है। क्योंकि आरक्षण का समर्थन या विरोध करने वाले गरीब ग्रामीण, श्रमजीवी का शोषण करने के मामले में एकमत हैं। मैं गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी के शोषण के विरूद्ध हूॅ । चाहे यह शोषण आरक्षण समर्थक करें या विरोधी। एक कमजोर हो चुकी गाय का मांस नोचने वाले अलग–अलग पशु आपस में झगड़ा करें तो मेरे जैसा

व्यक्ति उन दोनों के झगड़े के बीच में उचित अनुचित का निर्णय क्यों करे? गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी के शोषण से प्राप्त लाभ के बटवारे के झगड़े में मैं पंचायत नहीं करना चाहता। इसलिये मैंने दोनों को धूर्त लिखा है।

मैंने कई बार यह प्रस्ताव दिया कि गरीब, गामीण, श्रमजीवी के लिये कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि कर दी जाय और गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी के उत्पादन तथा उपभोग की सभी वस्तुएं कर मुक्त कर दी जाये। ऐसी परिस्थिति में मैं आरक्षण समाप्त करने का पक्षधर हूँ। मेरे विचार में ऐसा होने से शहर मंहगें होगे और गांवो से शहरों की ओर पलायन रूकेगा। साथ ही प्राप्त धन गरीबों में बांट कर आर्थिक असमानता कम हो सकती है। इसके साथ ही कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि से श्रम की मांग और मूल्य स्वतः बढ़ जायेगा। मैं सोचता था कि आप कभी न कभी इस प्रस्ताव के पक्ष विपक्ष में कुछ न कुछ जरूर लिखेगें। आपके आरक्षण विषय पर अनेक पत्र आये किन्तु आपने मेरे सुझाव के पक्ष विपक्ष में कुछ भी लिखना उचित नहीं समझा। अब आरक्षण विषय पर करीब तीनों महीने तक विस्तृत चर्चा होने के बाद इसे बंद कर दिया गया है। यही कारण है कि इस विषय पर अभी और चर्चा संभव नहीं है। अन्य विषयों पर हमारे आपके बीच विचार मंथन चलता रहेगा।

3साधारण नागरिको से बुलंद है भारत वरना लेफ्ट और राइट ने बर्बाद करने मे क्या कसर छोडी है– कल्पेश याग्निक। दैनिक भास्कर का संपादकीय

वामपंथी, जिनके पास आदर्शो के नाम पर क्रूर तानाशाहों जैसे वो नेता है–जिन्हें तानाशाही करने नहीं मिली तो जनवादी जुमले चला दिये कि सर्वहारा की तानाशाही। जबकि इच्छा भीतर–भीतर यही रही कि पावर गोज आउट ऑफ द बैरल आफ ए गन। दक्षिणपंथी वो प्रतिक्रियावादी ताकते जिन्हें लगता है कि संस्कृति का पूरा बोझ उन पर है। इस जिम्मेदारी के नाम पर वे सभी को डरा कर रखना चाहती हैं। आज का यह कॉलम उन सभी बुद्धिजीवियों को विचलित कर सकता है, जो सभी के जीवन को एक तयशुदा विचार धारा के बंधन से बांधकर देखते है।

इससे बड़ा धक्का क्या हो सकता है कि देश द्रोहियों को देशद्रोही कहने के लिये साहस तर्क और समर्थन जुटाना पडे? और धिक्कार है उन पर जो राष्ट्र विरोधी गतिविधियों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से जोड़कर बढ़ावा दे रहे हैं, और सावधान उन अतिवादियों से भी रहना होगा जो भारत की बर्बादी के इस बुद्धिहीन नारे के विरोध में चीखकर एक नया डर पैदा करना चाह रहे हैं। दोनो को जवाहर लाल नेहरू यूनिवर्सिटी जे एन यू से उठे एक बवंडर में स्वार्थ के बड़े अवसर दिख रहे है। इन दोनों तरह के नेतृत्व को ध्यान से देखना होगा। दोनों तरह की भीड़ को गहराई से जांचना होगा। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का कवच चाहने वाले वामपंथी है लेफ्ट। मुटठीभर देशद्रोहियों के कारण जे एन यू जैसे उच्च स्तरीय संस्थान पर बहस छेड़ना आपत्तिजनक है। जे एन यू वामपंथी रूझानवाला केन्द्रिय विश्वविद्यालय है किन्तु जिस तरह वामपंथी नेता जे एन यू पर बोल रहे है वो तो ऐसा लग रहा है मानो जे एन यू उनकी पार्टी की सरकार वाला कोई राज्य हो। यह जांचने के बजाये कि वहां आतंकी के समर्थन और महिमा मंडन में क्या कैसे हुआ वामपंथी नेता जे एन यू की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और योगदान पर भाषण दे रहे है। जैसे अपनी सरकार के अच्छे कार्यक्रमों का ब्योरा दे रही हो। जे एन यू का छात्र संघ चूंकि लेफ्ट समर्थित है इसलिये देशद्रोह के मुकदमे में उनका बौखलाना स्वाभाविक तो है किन्तु जिम्मेदारी से पूरी तरह परे है। भारत की बर्बादी के बुद्धिहीन नारे के विरोध में डर पैदा करने वाले अतिवादी दक्षिणपंथी , राईट। जे एन यू की श्रेष्ठ परम्पराओं पर अपनी सुविधा से आपत्ति उठाने वाले दक्षिणपंथियों को इस बाद शक्तिशाली मुद्दा मिल गया है। वे स्वयं को हिन्दू राष्ट्रवादी कहते है। उनकी मातृ संस्था राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ लगातार आधुनिक होने की बात कर रही है। इसमे न केवल विचारधारा पर आधुनिक परिवर्तन की बात है, जैसे कश्मीर मे धारा 370 पर नये सिरे से समीक्षा बातचीत विमर्श करना बल्कि पहनावे में भी नये जमाने के साथ चलना शामिल है, जैसे संघ के खाकी निकर की जगह फुल पैट पहनाने का प्रस्ताव। किन्तु ये मात्र बाते है। पूरा दक्षिणपंथ अतिवाद से ओत प्रोत है। विशेषकर अपने बूते पर बनी नरेन्द्र मोदी सरकार के बाद उसके तेवर तीखे और बोल कड़वे हो गये है। लव जिहाद, धर्मांतरण, पाकिस्तान चले जाओ जैसे नारे गूंजते जा रहे है। हमेशा देश को बहुसंख्यकों की मातृभूमि बताकर अल्पसंख्यकों को डराकर रखने वाली प्रतिक्रियावादी ताकतें है दक्षिणपंथी। किन्तु इस बार उनका पाकिस्तान चले जाओ वाला सपाट चुभने वाला तीर काम कर गया। चूंकि पाकिस्तान जिंदाबाद की गूंज भी तो थी जे एन यू के उस शोर में। इससे पहले ऐसा कशमीर मे ही होता पाया गया है और यह अलग बात है, विचारणीय है कि ऐसा तब से बहुत बढ़ गया जब से जम्मू कश्मीर मे पी.डी.पी. भाजपा की साझा सरकार बनी। किन्तु वहां आजादी का खोखला अलगाववादी नारा है। वर्षो से है। बना हुआ है/रहेगा। किराये के आतकियों, घुसपैठियों सीमा पार से भागकर अपराधियों के पक्ष मे चुनिंदा ताकते है जो ऐसा कर रही है।

किन्तु जे एन यू के ये कौन से छात्र है जो ऐसा सोचने लगे? कहने लगे? करने लगे? उन्हें किसी ने यह कभी क्यों नहीं समझाया कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक जुमला नहीं है। संविधान के अनुसार दिया गया श्रेष्ठ अधिकार है। इसका दुरूपयोग दुखदायी होगा। इन्ही के लिये। क्या किसी शिक्षक या वामपंथ ने उन्हें नहीं बताया कि डेमोक्रेसी और रिपब्लिक में एक महीन अंतर है? हमारा कोई पंथ नहीं है। हम किसी विचारधारा से बंधे हुए भी नहीं है। हमारा कोई वादा तो खैर है ही नहीं । किन्तु साधारण भारतीय नागरिक के रूप मे हमे बचपन में ही बता दिया गया था यह अंतर । डेमोक्रेसी यानी लोगों की सत्ता। जिसमें हम ही सर्वोच्च होगे। स्व शासन । लोकतंत्र । रिपब्लिक यानी लोगों की सर्वोच्चता को एक तयशुदा ढॉचे में ढालना जिससे कि संविधान न्याय कानून सरकार चुनाव आदि व्यवस्थाए बन सकें। संदर्भ यही है कि मात्र डेमोक्रेसी तो लाखों करोड़ों लोगों की अराजक सत्ता में बदल सकती है। रिपब्लिक होने से ही डेमोक्रेसी सच्चे स्वरूप में स्थापित होती है। इसलिये अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक आदर्श व्यवस्था है। किन्तु संविधान विरोधी कृत्य दंडनीय अपराध। कश्मीर आजादी मांगे, आमिर खान की धर्मपत्नी आशंकित हो देश छोड़ने के भाव व्यक्त करे या जे एन यू में ऐसी मांग कुछ मुठ्ठीभर उठाये ये सब एक बार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में आ भी जाये किन्तु भारत की बर्बादी ? वो कैसे आयेगी, किस अधिकार के अंतर्गत? माकपा, भाकपा भाले माले, फारवर्ड ब्लाक, लेफ्ट डेमोक्रेटिक फ्रंट पोलितब्यूरो कम्युनिस्ट पार्टी की इस–इस नम्बर की कांग्रेस। कोई तो बताये।

इस कांग्रेस का अर्थ तो खैर अधिवेशन सम्मेलन है। किन्तु जे एन यू बवंडर में कांग्रेस की भूमिका एक अलग ही तरह की है। उन्होंने अपने पूर्व कानून मंत्री को सामने किया है, जो सावधानियां गिना रहे है, इस बात की कि देशद्रोह का मुकदमा करना ठीक है क्या? एक बार कांग्रेस के बारे मे पुनः सोचे। उन्हें देश के संविधान की चिंता नहीं हैं। कानून की परवार नहीं है। उन्हें तो उस मुकदमे का दर्द सता रहा है। दुर्भाग्य है। ये वही कांग्रेस है, विचारधारा में लेफ्ट आफ द सेंटर , जिसने उस आतंकी को बडी मुश्किल से ही सही किन्तु फांसी पर लटकाया था। उसी आतंकी को जिसके पक्ष मे वामपंथी रूझान वाले छात्र इक्ट्ठे होकर भारत की बर्बादी का दिवास्वप्न देख रहे थे। हमारे यहां किसी आतंकी को फांसी देना एक दुरूह दुर्गम अनंत यात्रा की पीड़ा झेलने के समान है। सभी जानते है। हम उसे विधिविधान से इतनी सहायता देते जाते है कि एक तरह से समूचा कानून समूची न्याय व्यवस्था उस आतंकी के पक्ष में खड़ी नजर आती है। इससे उद्वेलित मैं बार–बार लिखता हूॅ कि यह हर तरह से अन्याय है क्योंकि न्याय पर पहला अधिकार पीड़ित का है, जिसे हम भुला देते है, तड़पता छोड़ देते है। ऐसे हाल ही के इतिहास के बावजूद यदि नेताओं की कतार देशद्रोहियों के पक्ष मे अपनी–अपनी तरह से खड़ी होती जायेगी तो परिणाम अराजकता ही होगा। किन्तु हां एक अंतिम तर्क। भारत की श्रेष्ठता किसी पंथ, वाद, विचारधारा आइडियोलांजी की मोहताज नहीं है। भारत की सर्वोच्च शक्ति इसके साधारण नागरिक ही है। पूरा भारतीय इतिहास ही पराजित शासकों का इतिहास है, और नागरिकों के दम पर ही ये विजयी होकर बना हुआ है। और उन्हें समय–समय पर जो कुछ सहज सरल व काम का लगता है, उसे वे अपना लेते है। और उसमे भी बंधते नहीं हैं। लचीले है, निरंतर परिवर्तनशील है, उनका अपना एक वैल्यू सिस्टम है। जैसे परिवार में सब लड़ते झगड़ते है, उतना ही एक दूसरे का ध्यान भी रखते है। त्याग करते है। फैमिली वैल्यू सिस्टम है। यही फिर बड़ा आकार लेकर भारतीय समाज की रचना करता है। जो देश का सभी धर्मो सभी संस्कृतियों का सम्मान करने के आधार पर बना समाज है। इसलिये भारत की बर्बादी हो ही नहीं सकती। कभी भी नहीं । बर्बाद करने आये मुगल साम्राज्य का एक वारिस भी आज ढूढ़े नहीं मिलता। बर्बाद करने आये ब्रिटिश साम्राज्य की दयनीय स्थिति यह है कि उनके प्रधानमंत्री हमारे प्रधानमंत्री से इच्छा जाहिर करते है कि ब्रिटेन का अगला प्रधानमंत्री मूलतः एक भारतीय हो। सबसे बड़े भारत विरोधी प्रधानमंत्री विस्टन चर्चित ने महात्मागांधी को भूखा नंगा फकीर कहा था उसी फकीर की विराट प्रतिमा उन्हीं की छाती पर ब्रिटेन की संसद ने ही लगवाई है। और भारत की बर्बादी की कामना करते हुए इतने किराये के आतंकी खड़े करने वाला देश पाकिस्तान की क्या हालत है? हम सब देख ही रहे है। एक ऐसा भू भाग जो हमसे अलग होकर एक पूरा सभ्य देश कभी बन ही न पाया। ऐसी जगह जहां कोई सुरक्षित नहीं बिन लादेन भी नहीं।

भारत किसी भू भाग का नाम नही है। भारत माता है। विश्व गुरू है। शान्ति पुंज ।

यह सच सभी को साफ दिखे असंभव है, किन्तु दिखाना ही होगा।

मुझे आपकी ही तरह गर्व है कि मै भारतीय हूॅ सौ जन्मों तक पुण्य किये होगे।

और कोई शर्म नहीं कि यहां भड़काने वाले राजनीतिक दल बने ही हुए है।

क्योकि यह उदारता ही भारतीयता है। हां देशद्रोहियो के प्रति कोई उदारता हमारी न्याय व्यवस्था में नहीं होनी चाहिये।

दिल्ली न्यायालय मे जे एन यू छात्रों और वकीलों का संघर्ष

श्री संजय तिवारी ने प्रश्न किया है कि दिल्ली के एक न्यायालय मे छात्र संघ के नेता कन्हैया कुमार की पेशी के दौरान छात्रों के साथ संघ समर्थित वकीलों की एक पक्षीय मारपीट हुई। भाजपा के एक विधायक ने खुले आम एक जे एन यू छात्र को एक तरफा रूप से पीटा। मीडिया कर्मी भी वकीलों द्वारा पीटे गये। क्या यह उचित है। क्या यह मौलिक अधिकारों का उल्लघन नहीं है? क्या यह अपराध नहीं है? आज भी न्यायालय में कुछ ऐसी ही घटनाएं हुई। इस संबंध मे आपके क्या विचार है।

मैने इस प्रश्न पर गंभीरता पूर्वक और विस्तार पूर्वक सोचा। अधिकार तीन प्रकार के होते हैं। 1. मौलिक अधिकार 2. सामाजिक अधिकार 3. संवैधानिक अधिकार । मौलिक अधिकारों का उल्लघन हमेशा अपराध होता है। सामाजिक अधिकारों का उल्लघन अनैतिक होता है और संवैधानिक अधिकारो का उल्लघन सिर्फ गैर कानूनी होता है, कभी अपराध या अनैतिक नहीं होता, जब तक वह मौलिक या सामाजिक अधिकारों का भी उल्लघन न करता हो। मौलिक अधिकार सिर्फ व्यक्ति के होते हैं, समूह के नहीं, संगठन के नहीं। मौलिक अधिकारों की सुरक्षा व्यक्ति समाज तथा सरकार का मिला जुला दायित्व होता है। जबकि सामाजिक अधिकारों की सुरक्षा व्यक्ति और समाज का दायित्व होता है। और कानूनी अधिकारों की सुरक्षा कानून का अर्थात संवैधानिक व्यवस्था का दायित्व होता है। दायित्व बाध्यकारी होता है और कर्तव्य स्वैच्छिक।

दिल्ली में न्यायालय परिसर में नारा लगाने वाल छात्रों या शिक्षकों का कोई मौलिक अधिकार नहीं था। क्योंकि वे व्यक्तिगत रूप से किसी घटना के पक्ष–विपक्ष मे सिर्फ मत व्यक्त करने तक सीमित नहीं थे, न ही वे अपनी सीमा में रहकर विरोध व्यक्त कर रहे थे। वहां पर जो भी विरोध व्यक्त किया जा रहा था वह किसी संवैधानिक अधिकार के अंतर्गत था और मार पीट करने वालों ने भी किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का उल्लघन न करके संवैधानिक अधिकारों का उल्लघन किया। यहा मै स्पष्ट कर दूं कि कई वर्ष पूर्व प्रशांत भूषण द्वारा कश्मीर के संबंध में दिये गये बयान, ब्रहमदेव शर्मा द्वारा बस्तर में नक्सलवाद के पक्ष में दिये गये बयान, तथा मेघापाटकर द्वारा गुजरात चुनाव में संघ के विरूद्ध दिये गये व्यक्तिगत बयान के विरूद्ध कुछ संघ परिवार के लोगों ने हिंसक आक्रमण किया था। मैंने खुला विरोध किया था क्योंकि वह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन था, व्यक्तिगत विचार था, किसी सीमा के अंर्तगत था, भले ही वह राष्ट्र विरोधी क्यों न हो। दूसरी ओर सोहराबुद्दीन इसरत जहां की गैर कानूनी फर्जी मुठभेड़ में की गई हत्या का मैंने यह कहकर समर्थन किया था कि यदि किसी अपराधी को बिना न्यायालय में प्रस्तुत किये पुलिस फर्जी तरीके से हत्या कर दे तो पुलिस का यह कार्य गैर कानूनी है किन्तु अपराध नहीं, असामाजिक भी नहीं। प्रश्न उठता है कि जो छात्र वहां प्रदर्शन कर रहे थे उनका कार्य संवैधानिक तो था किन्तु सामाजिक नहीं, स्वतंत्रता के अतर्गत नहीं । इस तरह उन पर किया गया आक्रमण भी गैर कानूनी कार्य मे हो सकता है, किन्तु असामाजिक नहीं, अपराध नहीं।

एक छात्र को एक विधायक ने बुरी तरह एक पक्षीय तरीके से पीटा। वह छात्र न्यायालय परिसर के सामने कुछ नारे लगा रहा था, जो राष्ट्र विरोधी नहीं थे। वह छात्र वहां केन्द्रीय वित्त मंत्री के खिलाफ भी नारे लगा रहा था। प्रश्न उठता है कि उस छात्र का नारे लगाना उसका मौलिक अधिकार था या संवैधानिक या सामाजिक। उस छात्र को यदि विपक्षी विधायक ने बहुत पीटा तो इसमे मौलिक अधिकारों का उल्लंघन कहां से आ गया तथा इसमे समाज की भूमिका क्यों आनी चाहिये? न तो वह छात्र कोई सामाजिक कार्य कर रहा था न ही पीटने वाला। मैं जानता हूॅ कि यदि अन्ना हजारे किसी व्यक्ति को अपशब्द कह दें और लालू, मुलायम किसी बेगुनाह को पीट भी दे तो अन्ना हजारे समाज की दृष्टि से अन्यों की अपेक्षा अधिक गिर जायेगे। किन्तु लालू, मुलायम को सामाजिक दृष्टि से कोई अंतर नहीं पड़ेगा। मैं तो देख रहा हूॅ कि तीन वर्ष पूर्व अरविन्द केजरीवाल को जिस तरह सामाजिक व्यक्ति माना जाता था अब बदलकर राजनैतिक माना जाने लगा है। यदि किसी विवाद मे अरविन्द्र केजरीवाल को कोई विरोधी नेता अपशब्द कह दे तो कोई सामाजिक प्रतिकिया की संभावना नहीं है। भले ही राजनैतिक प्रतिकिया कुछ भी क्यों न हो।

आपने मीडिया कर्मियो पर होने वाले आक्रमण की भी चर्चा की है। मीडिया कर्मी लोकतंत्र के चौथे स्तंभ है। पर घोषणा राजनैतिक है, संवैधानिक है, किन्तु समाज द्वारा घोषित नहीं। मीडिया कर्मियो को कही भी जाकर प्रश्न पूछने का अधिकार न मौलिक अधिकार है न ही सामाजिक। यह तो उनका संवैधानिक अधिकार है। इसका अर्थ हुआ कि उनको राहत भी संवैधानिक कानूनी तरीके से ही मिल सकती है। इसका अर्थ हुआ कि न्यायालय परिसर के अंदर बाहर जो विवाद हुआ, अथवा यदि कोई दुर्व्यवहार भी हुआ तो वह न किसी के मौलिक अधिकार का उल्लंघन हुआ न ही किसी के सामाजिक अधिकार का। मेरे विचार मे तो वहां की मारपीट संवैधानिक अधिकारो के

लिये थी जिसका निर्णय कानून या संविधान करेगा। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि दो व्यवसायी पक्ष व्यावसायिक कारणों से आपस में मारपीट करते हैं तो उसमे कोई सामाजिक हस्तक्षेप आवश्यक नहीं। स्पष्ट है कि न्यायालय परिसर के बाहर और भीतर होने वाले विवाद में, मारपीट में, मैं पूरी तरह अप्रभावित रहा। विधायक ने यह भी कहा कि मैं ऐसी परिस्थिति में गोली भी मार सकता हॅूं। विधायक ने जो कहा वह कानून का उल्लंघन हो सकता है किन्तु किसी के मौलिक और सामाजिक अधिकार का उल्लघन नहीं है, जब तक किसी व्यक्ति को बिना किसी प्रकार का अपराध किये पीटने की धमकी न दी जाये। मैं फिर कह दूं कि जो लोग अभिव्यक्ति की आजादी की सीमाओं में रहकर पाकिस्तान के पक्ष में बोलते हैं उनके विरूद्ध किसी प्रकार का आक्रमण करना मैं अपराध मानता हॅू। किन्तु जो लोग इस स्वतंत्रता का दुरूपयोग करके सामुहिक रूप से या व्यक्तिगत रूप से कोई क्रिया में संलग्न होते हैं तो मेरे विचार में वे अपनी सीमा तोड़ते हैं और ऐसे मामलों में मैं परिस्थिति अनुसार या तो चुप रहता हॅू या न्याय की बात छोड़कर कमजोर का साथ देता हॅूं। जिससे ऐसे संगठन आपस में तब तक टकराते रहे जब तक दोनों संगठन शक्तिहीन होकर निष्क्रिय न हो जायें।

आज बंगाल मे भी जे एन यू सरीखे नारे लगे। आज फिर से न्यायालय में अधिवक्ताओं के दोनों गुट आपस में भिड़े । आज न्यायालय में कन्हैया कुमार पर भी हमले की कोशिश की गई। आज फिर अधिवक्ता और पत्रकार आपस में भिड़ने का प्रयास कर रहे थे। जो भी हो रहा है वह संगठनों का आपसी विवाद है। वकील और पत्रकार अलग–अलग संगठन है, और दूसरों के अधिकारों का हनन करने में तो एक जुट रहते है। ऐसे लोग यदि आपस में भिड़े तो इसमे कोई असामाजिक कार्य नहीं दिखता। इसलिये हम सब लोगों को चिंतित होने की कोई बात नहीं है।

(1) हिन्दू, मुस्लिम, जात–पात पर तोड़ दिया संसार को।
देश के नेता कुछ तो छोड़ो, मत तोडो परिवार को।।

(2) कृत्रिम ऊर्जा सस्ती हो यह बहुत बड़ा षड़यंत्र है।
श्रम का शोषण करने का यह पूॅजीवादी मंत्र है।।

(3) राजनीति बन गई तवायफ, नेता हुए दलाल।
ऐसे में क्या होगा भइया इस समाज का हाल।।
संसद को एक पलंग समझकर उस पर शयन किया।
संविधान को मानके चादर ,खींचा ओढ़ लिया।।
अब तक हमने बहुत सहा, अब सहेंगे नहीं, हम चुप रहेंगे नहीं।
चादर हटा देंगे हम, सब कुछ दिखा देंगे हम, कचड़ा जला देंगे हम।।

उत्तरार्ध

बैक एकाउंट न–11374646729, बजरंग लाल अग्रवाल, भारतीय स्टेट बैक, रामानुजगंज छत्तीसगढ
व्यवस्था परिवर्तन अभियान से जुडने के लिये मिस्ड कांल करे–8287544441